International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 31-01-2021; Accepted: 16-02-2021; Published: 14-03-2021
www.hindijournal.com
Volume 7; Issue 2; 2021; Page No. 32-35

कोरपोरेट वैश्वीकरण और किसान आत्महत्याएँ- 'फाँस' के संदर्भ में

जसीला ए.के[1]*, आनंद टी.ए[2]

[1]शोध छात्रा, हिंदी विभाग, सरकारी आर्टस व साइंस कालेज, कोषिकोड, केरल, भारत,

[2]शोध निदेशक, सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, सरकारी आर्टस व साइंस कालेज, कोषिकोड, केरल, भारत

सारांश

पहले किसान और ज़मीन के बीच का संबंध सरल था। लेकिन आज भारत के छोटे किसान विनाश के कगार पर है । राष्ट्रीय अपराध रेकोर्ड ब्योरो द्वारा प्रस्तुत आंकडों के अनुसार सन् 1995 के बाद पूरे देश में तीन लाख से अधिक किसानों ने आत्महत्या की है । जैसे ही कृषि व्यवस्था जमीन से, हवा-पानी से और जैव-वैविधता से दूर हुआ तथा वैश्विक निगमों और वैश्विक बाजार से जुड़ा, तब से भारत के छोटे किसानों की उल्टी गिनती शुरू हो गई। संजीव ने 'फाँस' उपन्यास में किसानों की बदहाली के लिए उत्तरदायी खुली व्यापार नीतियों तथा कोरपोरेट सेक्टरों की षडयंत्रों को बेपर्दा किया है ।

मूलशब्दः किसान-आत्महत्या, फाँस, कोरपोरेट वैश्वीकरण, आत्मनिर्भर उत्पादक, पराश्रित एवं विकल्पहीन उत्पादक

प्रस्तावना

साहित्यकार अपने समाज का सबसे भावुक और विचारशील प्राणी होता है । इसलिए वह समाज में घटित होने वाली घटनाओं से अपने आपको अलग नहीं कर सकता । जो घटनाएँ वह समाज में देखता है ,जिन परिस्थितियों को वह भोगता है उन्हीं का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में करता है । वर्तमान संदर्भ में किसान आत्महत्या सबसे भयावह और त्रासदपूर्ण स्थिति है । संजीव ने किसान और उनके समस्याओं पर गहरा अनुसंधान करके फाँस उपन्यास का सृजन किया है । प्रस्तुत उपन्यास वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में महाराष्ट्र के विदर्भ को केंद्र में रखकर पूरे भारत के किसान समस्याओं और आत्महत्याओं की ओर प्रकाश डाला है। उपन्यास में शिबु, मोहन बाघमारे, सुनील, आशा वानखेड़े जैसे पात्रों के माध्यम से किसानों के दुखःदर्द, संघर्ष और उनके दारुण दशा को अभिव्यक्त किया है । इन समस्याओं के समाधान के खोज में कहानी आगे बढ़ती है । इसमें कलावती, विजयेंद्र, सिंधुताई , दादाजी खोब्राखड़े जैसे पात्र प्रमुख है जो समय और समस्याओं से संघर्ष करने के लिए उठ खड़े हैं ।

किसान भारतीय संस्कृति की रीढ़ मानी जाती है । किंतु यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि किसानों की हित की बलि चढ़ाकर ही हम आज इस तथाकदित 'विकास' के मुक़ाम पर पहुँचे हैं । सच्चिदानंद सिन्हा के शब्दों में "शहरी संस्कृति और साम्राज्यों का अब तक का पूरा इतिहास यह बतलाता है कि प्राचीन काल से अब तक नगर केंद्रित सभ्यताओं का आधार किसी न किसी तरह कृषि उत्पादकों के शोषण से प्राप्त अधिशेष ही रहा है ।"[1] यहाँ किसानों से तात्पर्य उन छोटे किसानों से है जिनके पास पाँच एकड़ से कम ज़मीन होती है और अपनी छोटे जोतों पर पारिवारिक श्रम और अपेक्षागत छोटे उपकरणों से काम करते हैं । सन् 1997 में पहली बार भारत में किसान आत्महत्या रिपोर्ट की गई । ऋणग्रस्तता में तेजी से वृध्दि ही किसान आत्महत्या का मूल कारण था । ऋण नकारात्मक अर्थव्यवस्था का सूचक है । कृषि व्यवस्था को सकारात्मक अर्थव्यवस्था से नकारात्मक अर्थव्यवस्था में तब्दील करने में दो कारण मुख्य है -

एक खेती के लागत में विस्फोटक वृध्दि और दूसरा खेती से होनेवाली आय में भारी कमी । इन दोनों समस्याओं का सीधा संबंध उदारीकरण और कोरपोरेट वैश्वीकरण से है ।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने समझ लिया कि तीसरी दुनिया के खाद्यान्न और कृषि पर कब्ज़ा करने से एक बड़ा बाजार खुल जाएगा और वे विश्व अर्थव्यवस्था पर वर्चस्व स्थापित कर सकेंगे । उन्हें यह भी पता था कि विकासशील देशों के कृषि क्षेत्र को सरकारी नियंत्रण से हटा दिया जाए तो वे वहाँ आसानी से घुस सकते हैं । इसके लिए अवश्यक सुविधाएँ तथा संस्थागत व्यवस्थाएँ आई एम एफ, विश्व बैंक, गैट (GAAT), और विश्व व्यापार संगठन आदि के माध्यम से सुनिश्चित की गई ।

आई एम एफ और विश्व बैंक ऐसी दो संस्थाएँ हैं जिनकी स्थापना वैश्विक अर्थ व्यवस्था को सुधारने के लिए हुई थी किंतु बाद में ये अमेरिका जैसे विकसित देशों के हितों के संरक्षक मात्र बन गए । पूँजी और प्रौद्योगिकी का दुनिया भर निवेश और प्रसार, निजी क्षेत्र का अनियंत्रित विस्तार और सरकार का कम से कम नियंत्रण आदि इनकी माँग है । जो देश इन संस्थाओं से उधार लेता है, इनके शर्तों के अनुसार उसे अपने आर्थिक व्यवस्था को सुधारना पड़ता है । इस कारण से भारत ने सन् 1994 में गैट समझौते पर हस्ताक्षर किए और सन् 1995 से विश्व व्यापार संगठन के सदस्य बना । नई औद्योगिक नीति के तहत बाज़ार के ऊपर से सरकार का नियंत्रण हटाना (उदारीकरण), सार्वजनिक उपक्रमों को निजी हाथों में देना (निजीकरण) और आयात दर कम करके मुक्त व्यापार के लिए बंधनों को हटाना (भूमंडलीकरण) जैसे संरचनात्मक सुधार लाए गए । भूमंडलीकरण केवल एक स्वतंत्र व्यापार नीति ही नहीं बल्कि यह एक संस्कृति को मिटाने की सोची समझी साजिश है ।

किसान को विकल्पहीन बनाने वाला अंतक बीज

विश्व व्यापार संगठन के दबाव में भारत को अपने बीज क्षेत्र को मोन्सांटो, कारगिल जैसे वैश्विक निगमों के लिए खोलना पड़ा । खेत में परंपरागत बीज की जगह कोरपोरेट बीज ने ले लिया । प्रस्तुत उपन्यास के एक लुटा हुआ किसान पात्र उस दिन को इस प्रकार याद करता है जिस दिन ये हायब्रिड बीज उनके जीवन में एक काली आंधी की तरह आया था "कोई मनहूस दिन था जब मनोकामनोओं की सिध्दि के लिए वरदान बनाकर पेश किया था मोसेंटो कंपनी इस बीज को ।"[2] जेनेटिकली संशोधित और परिवर्धित इस हायब्रिड बीज की यही समस्या रही कि इनका बीज दूसरी बार उपयोग में नहीं लाया जा सकता । इस विदेशी बीज को महंगे खाद, महंगे कीटनाशक की जरूरत थी । पेटेंट और जेनेटिक एंजिनियरिंग के चलते किसान को हर बार बड़े कीमत देकर बीज खरीदना पड़ा । इससे ऋण बढ़ने लगा । बी.टी को बिना सोचे समझे लागु कर दिया गया । परंपरागत किसानी को गला दबाकर मार डाला गया । विदेशी पद्धति को बेचने और प्रोमोट करने के लिए सरकारें कंपनियों की दलाल बन गए । इस बीज ने खेती व्यवस्था को किस प्रकार तोड़ दिया है इसका सच्चा चित्र उपन्यास में मिलता है । मोहन बाघमारे, नाना बापटराव, सुनील जैसे लोग यह बखूबी समझते है कि कपास के बी.टी बीज के आने के बाद ही स्थितियाँ खराब हुई है । एक बार तो अच्छी फसल हुई, पर बीज ने अगली बार धोखा दिया । पुराने देशी बीज कहीं नहीं मिले । मोहन अपने मजबूरी को इस प्रकार प्रकट करते है "कौन नहीं चाहता कि उसके बाल बच्चे खुशहाल रहें कौन नहीं चाहता कि उसकी बायको (पत्नी) के गले में भी पतली ही सही, सोनो की एक चेन हो । रहा पुराना बीज तो कहाँ कहाँ नहीं खोजा गया ।"[3] उनकी पत्नि गुस्से में इसका जवाब देती है "बी.टी बोये, धन्ना सेठ बनने के लिए । फकीर बनकर रह गए ।"[4] बी.टी बीज के कारण किसान को हर बार भारी नुक्सान उठाना पड़ा । लेकिन वह अगली बार एक नई उम्मीद के साथ फिर से बीज बोते है । इस विश्वास की रक्षा करने के लिए कलावती अपने हाथों के बीजों से प्रार्थना करती है "दो-दो बार धोखा हो चुका है । इस बार बहना नहीं ,बिलाना नहीं , सड़ना नहीं ,सूखना नहीं । दगा मत देना बरोबार जम सिल ।"[5] विदेशी बीज और विदेशी नीति के कारण धरती और किसान सूखा पड़ गया है । कोरपोरेट कल्चर या बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ बाज़ार में केवल लाभ कमाने के उद्देश्य से आती है । उसकी सामाजिक ज़िम्मेदारी सिर्फ इतनी होती है कि ग्राहक या उपभोक्ता ज़िंदा रहे । इन्हें और इनके प्रतिनिधि

नेताओं को इसके आगे किसी भी चीज़ से कोई मतलब नहीं । कोरपोरेट सेक्टर की इस वास्तविकता को उपन्यास में कर्ज़दार किसान की पढ़ी लिखी बेटी कलावती उजागर करती है "कोरपोरेट सोशल रेस्पांसिबिलिटि इन देसी-विदेशी सेठों की ज़िम्मेवारी । आपूर्ति उतनी ही होती है, जितने में इसका ग्राहक बचा रहे । किसी को भी किसानों की आत्महत्या की फिकर नहीं , किसी को भी नहीं ।"[6] ये इस बात को स्पष्ट करती है कि किसान आज अपने दुशमनों को अच्छी तरह पहचान रही है ।

विदेशी कंपनी द्वारा भारत में आए ट्रान्सजेनिक बी.टी धरती की उर्वरता को सोख लेता है । बी.टी इस दावे के साथ आया था कि "प्रथम दो छिटकाव के बाद कीटनाशक की जरूरत कम होती जाएगी ।"[7] मगर ठीक उलटा हुआ । इस बीज ने प्रकृति के साथ-साथ प्रकृति से जुड़ने वाले किसानों को भी बूरी तरह प्रभावित किया । किसानों के साथ यह दिक्कत हुई कि उन्हें कीड़ों को मारने के लिए अधिक महंगे कीटनाशक का इस्तेमाल करना पड़ा । उसे कर्ज़दार बनाने में यह एक महत्वपूर्ण कारण बना । बी.टी बीज के कारण पर्यावरण प्रदूषण के साथ प्रकृति में होने वाली स्वाभाविक परागण प्रक्रिया भी असंतुलित हुई । "डोंडों की कीड़े भी न मरे , प्राकृतिक परागण से भी हाथ धो बैठे मधु भी ज़हरीला हो गया । यानी मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की ।"[8] बी.टी ने बूरी तरह किसान को फँसा दिया है ।

सस्ते आयात और पूँजीवादी-सामंतवादी व्यवस्था में पिसता किसान

खुली व्यापार नीति तथा वैश्वीकरण की लहर ने किसान को झकझोरा है । यहाँ ऐसी चीज़ें आयात कर रहे हैं जो पहले से यहाँ सुलभ है । विदेशी कंपनियाँ यहाँ सस्ते में बेच रही हैं । इससे किसान को अपने माल का कम भाव मिलता है, कभी कुछ नहीं मिलता । बिक्री केंद्र में किसान अपने उत्पादों को कम रकम में बेचने के लिए विवश है । "क्या चढ़ जाएगा? दो दिन का खर्चा जोड़ो । अपना भी, बैल का भी । नहीं-नहीं तो तीन सौ तो ठुक ही जाएँगे । दो दिन और रुक जाऊ तो कुबेर का खजाना नहीं खुल जाएगा मैं तो बिट्ठल को सौंपकर जो भी दो-चार पैसे मिलेगा लेकर लौट आऊँगा ।"[9] एक तो कर्ज़ लेकर खेती करती है और ऊपर से फसल को उचित भाव भी नहीं मिल रहा है । इसलिए सुरेश अपने माल को मंडी में बेचे बिना घर लौटता है उनके शब्दों में "साफ लूट रहे हैं । मैंने इतने कम रेट पर खून -पसीने की कमाई नहीं बेची । "[10]

कर्ज़ के इस भयावह आतंक ने भारतीय किसानों का जीना दूभर कर दिया है । स्वाधीनता से पहले जमींदार और साहूकार दोनों मिलकर लूटते थे लेकिन आज़ादी के बाद गाँव का बड़ा भूपति साहूकार बनकर अपने ही किसानों को लूट रहा है । महंगे बीजों ,खादों और कीटनाशकों के कारण ज़्यादतर किसानों को कर्ज़ लेना पड़ता है । सरकारी बैंकों की ऋण लेने-देने की व्यवस्था बिलकुल किसान विरोधी है । इसलीए किसान को गाँव के साहूकारों के पास मजबूरन जाना पड़ता है । विदेशी बीज और देसी कर्ज़ के बीच पिसता किसान अंत में मौत का वरण करता है । आशा वानखेड़े एक सच्ची किसान थी । लेकिन खेती ने उसे हराया । तीन साल की खेती ने उसे कर्ज़ के अलावा कुछ नहीं दिया । हर बार फसल खराब हो जाने पर भी नए उम्मीद के साथ अगली बार फिर से खेती करती है । लेकिन कर्ज़ साल-दर साल बढ़ता रहा बाढ़ के पानी की तरह । जब आशा कर्ज़ लौटाने की स्थिति में नहीं रही तो साहूकार-महाजन आनंद कहता है "अब तुम कहती हो कि तुम्हें और चाहिए । पहले पुराने लौटाओ फिर नया ले जाओ,नहीं तो सूद-दर-सूद इतना बढ़ जाएगा कि कभी उतार नहीं पाओगी, फिर शेत ही लिख देना पड़ेगा मेरे को ।"[11] अंत में कर्ज़ न चुका पाने के कारण वह आत्महत्या करती है । लाश पर बिछाने के लिए उस घर में भीगे कपास के अतिरिक्त कुछ नहीं था । आशा की बेटियाँ कपास से कफन बनाती हैं और कहती हैं "यही कापूस कफन बन गया हमारे लिए ।"[12]

निष्कर्ष

वैश्वीकरण के इस दौर में कृषि एक संस्कृति से उद्योग में बदल गई है । महंगे बीज और महंगे खाद को बेचने वाले सशक्त 'ग्लोबल कोरपोरेट' ने किसान को एक आत्मनिर्भर उत्पादक से पराश्रित एवं विकल्पहीन उत्पादक बना दिया है । देसी साहूकार उसका खून चूस रहा है । साथ ही, हमारी प्रशासनिक

और तकनीकी व्यवस्था इस कोरपोरेट पूँजीवाद की दलाली कर रही है । कुल मिलाकर आज के संदर्भ में किसान के लिए जीना एक बंधन है और मौत एक मुक्ति । इस सच्चाई को संजीव ने गहरी संवेदनाओं के साथ इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है ।

संदर्भ सूची

1. सच्चिदानंद सिन्हा. *भूमंडलीकरण की चुनौतियाँ*, वाणी प्रकाशन, 2005, पृष्ठ123
2. संजीव. *फाँस*, वाणी प्रकाशन, 2015, पृ.189
3. वही, पृ.41
4. वही, पृ.41
5. वही, पृ.99
6. वही, पृ.15
7. वही, पृ.199
8. वही, पृ.201
9. वही, पृ.142
10. वही, पृ.144
11. वही, पृ.139
12. वही, पृ.145S